इस प्रकार भगवत्सेवा के लिए वह सदा-सर्वदा साहसी तथा क्रियाशील रहता है, राग-द्वेष से लिपायमान नहीं होता। राग का अर्थ अपनी इन्द्रियतृप्ति के लिए किसी वस्तु को स्वीकार करना है, जबकि ऐसी विषयैषणा का अभाव वैराग्य कहलाता है। परन्तु कृष्णभावनाभावित भक्त में न राग होता है और न वैराग्य ही; उसका तो पूरा का पूरा जीवन ही श्रीकृष्ण की सेवा में समर्पित रहता है। अतएव उद्यम के विफल होने पर भी उसे लेशमात्र क्षोभ अथवा क्रोध नहीं होता। कृष्णभावनाभावित भक्त नित्य कृतसंकल्प रहता है।

20.2

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।५७।।

यः =जो; **सर्वत्र** =सर्वत्र; **अनभिस्नेहः** =स्नेहशून्य हुआ; **तत्** =उस; **तत्** =उस; **प्राप्य** =प्राप्त कर; **शुभ** =लाभ; **अशुभम्** =हानि को; **न** =नहीं; **अभिनन्दति** =आनन्दित होता; **न** =नहीं; **द्वेष्टि** =द्वेष करता है; **तस्य** =उस का; **प्रज्ञा** =पूर्ण ज्ञान; **प्रतिष्ठिता** = अचल है।

अनुवाद

जो पुरुष सब ओर स्नेहरहित हुआ न तो शुभ की प्राप्ति से हर्षित होता और न अशुभ की प्राप्ति में शोक करता, वह पूर्ण ज्ञान में निष्ठ है।।५७।।

तात्पर्य

प्राकृत-जगत् में नित्य-निरन्तर शुभ-अशुभ उथल-पुथल होती रहती है। जो इससे उद्वेलित नहीं होता, शुभ-अशुभ से अप्रभावित रहता है, उस पुरुष को कृष्णभावनाभावित जानना चाहिए। जब तक संसार में निवास है, तब तक शुभ-अशुभ की सम्भावना बनी रहेगी, क्योंकि यह जगत् द्वंद्वों से पूर्ण है। परन्तु कृष्णभावनाभावित अनन्य भक्त इनसे प्रभावित नहीं होता; उसका प्रयोजन एकमात्र श्रीकृष्ण से ही रहता है, जो सर्व मंगलमय हैं। यह कृष्णभावना शुद्ध सत्त्वमयी समाधि प्रदान करती है।

21.2

यदा संहरते चायं कूर्मोऽगानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।५८।।

यदा =जिस काल में; **संहरते** =समेट लेता है; **च** =तथा; **अयम्** =यह; **कूर्मः** =कछुआ के; **अंगानि इव** =अंगों की भाँति; **सर्वशः** =सब ओर से; **इन्द्रियाणि** =इन्द्रियों को; **इन्द्रिय अर्थेभ्यः** =इन्द्रिय-विषयों से; **तस्य** =उसकी; **प्रज्ञा** =बुद्धि; **प्रतिष्ठिता** =स्थिर कही जाती है।

अनुवाद

जिस प्रकार कछुआ अपने अंगों को सब ओर से समेट लेता है, उसी भाँति जो पुरुष अपनी इन्द्रियों को इन्द्रियविषयों से हटा सकता है, उसकी बुद्धि स्थिर है, अर्थात् वह यथार्थ में परम ज्ञानी है।।५८।।

तात्पर्य

किसी भी योगी, भक्त अथवा स्वरूपप्राप्त महात्मा की कसौटी यह है कि वह